Original Research Paper | Arts | Volume : 08 | Issue : 11 | Nov 2023 | e-ISSN : 2456-5040

अष्टछाप के कवियों का भारतीय संगीत में योगदान

डॉ. महेश चंद्र पाण्डे

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत विभाग, एम.बी.राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हल्द्वानी (नैनीताल)

ABSTRACT

पुष्टीमार्गी कीर्तन का साहित्यिक केवल अष्टछाप की रचनाएं ही हो ऐसी बात नहीं है। उनके अलावा अन्य भक्त गायकों की रचनाएं भी गई जाती है, परन्तु अष्टछाप कवियों के बिना पुष्टि मार्ग की कल्पना करना संभव नहीं है। गोस्वामी विट्ठल नाथ जी को 'श्रीनाथजी' की सेवा का विस्तार करना था, यद्यपि उन्होंने स्वयं भी अनेक संस्कृत, तेलुगू, ब्रजभाषा में पद लिखे, तथापि इसके लिए उन्हें श्रेष्ठ कवि और संगीतज्ञों की आवश्यकता लगी। उनकी विचित्र प्रतिभा ने ऐसे कई गायकों को ढूंढ निकाला। उन्होंने अष्टयाम की सेवा के लिए, अष्ट सखाओ की मंडली बनाई। जिसमें चार गायक सेवि (श्री कुंभनदास जी, श्री सूरदास जी, श्री कृष्ण दास जी, श्री परमानंद दासजी) अपने पिता के लिए तथा चार गायक सेवी (श्री गोविंद स्वामी, श्री छीत स्वामी, श्री चतुर्भुज दास, श्री नंददास) अपने लिए रखे। यही मंडली हिंदी साहित्य जगत में अष्टछाप के नाम से प्रसिद्ध हुई। यह सभी सखा उच्च कोटि के कवि और संगीतज्ञ थे।

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य में प्राचीन काल से पूर्व, वैदिक काल तक, संगीत के दर्शन सर्वथा प्राप्त होते हैं। वैदिक काल की बात करें तो, उस समय वेद के मंत्र, यज्ञ–हवन में प्रयुक्त होते थे तथा ईश्वर उपासना का कार्य भी करते थे। उस समय के संगीत का जो स्वरूप है, वह पूर्ण रूप से मोक्ष प्राप्ति करने वाला है। जिसको 'मार्गी संगीत' भी कहा जाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि मंदिर संगीत कोई नई अवधारणा नहीं है। अपितु भिन्न स्वरूप लिए, यह अति प्राचीन काल के, मोक्ष प्राप्ति मार्ग के ही समरूप है। कालांतर में जब संगीत का प्रयोग, केवल साधन से हटकर, मनोरंजन हेतु भी होने लगा तो वहीं से 'देशी संगीत' का जन्म हुआ तथा विलासिता पूर्ण यह संगीत संपूर्ण संसार में घर कर गया। वही मोक्ष रूपी मार्गी संगीत केवल साधक, संत, सूफी गायक,कवियों के ही पास रह गया।मध्यकाल आते–आते संगीत में असोचनीय परिवर्तन हुए। जिस संगीत का निर्माण ही, ईश्वर द्वारा और ईश्वर हेतु हुआ था, वह संगीत कालांतर में विकृत हो गया। ऐसे ही आक्रांताओं तथा मालिन संगीत से समाज को हटाकर भक्ति मार्ग में प्रशस्त करने हेतु गोस्वामी विठ्ठल जी ने इससे कई वर्ष पूर्व अष्टछाप के कवियों की स्थापना की। जिन्होंने संगीत के मूल भक्ति व आध्यात्मिक अर्थ को जीवित रखने का कार्य किया। अष्टछाप की स्थापना 1565 ई. में गोस्वामी विट्ठलनाथ (महाप्रभु वल्लभाचार्य के पुत्र) द्वारा की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य श्रीनाथजी के मंदिर में कृष्ण की लीलाओं का गुणगान करने के लिए संगीतबद्ध कीर्तन की परंपरा को व्यवस्थित करना था।

संप्रदाय के सर्वप्रथम गायक कुंभन्दासजी

पुष्टिमार्गीय संगीत का सूत्रपात संवत १५५६ वि..में जमुनावतौ गाँव के निवासी श्री कुंभन दास के हाथों हुआ। श्री कुंभन दास जी पुष्टिमार्गीय संगीत के सर्वप्रथम संगीतकार कीर्तनकार थे। वार्ता साहित्य से ज्ञात होता है कि कुंभन दास जी एक सुविख्यात गायक थे और श्री वल्लभाचार्य ने सर्वप्रथम इन्हीं को कीर्तन की सेवा के लिए आज्ञा दी थी।

यथा श्री गोवर्धननाथ जी की वार्ता में लिखा है – "तब श्री आचार्य जी ने श्रीनाथजी की सेवा में बंगाली ब्राह्मण हते तिनकों सेवा की रीत बताई माधवेंद्रपुरी कूँ मुखिया किये और उनके शिष्यन कूँ सेवा में राख दियो, कृष्णदास जी को अधिकार की सेवा दिए, कुंभन्दासस कूँ कीर्तन की सेवा दिए और श्री आचार्य जी महाप्रभून ने नित्य को नेग बांध्यो.....। वार्ता साहित्य के ही साक्ष्य से यह ज्ञात होता है कि श्री कुंभनदास जी गोवर्धन के पास जमुनावतौ गांव के निवासी थे तथा खेती करते थे, यथा– सो वे कुंभनदास जी श्री गोवर्धन पर्वत के पास जमुनावतौ गांव है तामै रहते। सो जमुनावतौ नाम व गांव को कहत है जो जमुना जी कौ प्रवाह सारस्वत् कल्प के याके निकट हुतौ ताते जमुनावतौ नाम वा गांव कौ है। तांमें कुंभन दास जी को रहते और परासोली चंद्र सरोवर के ऊपर उन कुंभन दास जी की धरती हुती सो वहां खेती करते....।

ब्रज प्रदेश की तत्कालीन सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के परिष्कृत रूप का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि एक सामान्य कृषक को भी संगीत का उत्कृष्ट ज्ञान होना संभव था। श्री कुंभन दास जी मधुर कंठ वाले भक्त कवि गायक थे तथा पुष्टि संप्रदाय में दीक्षित होने से पूर्व ही कुशल गायक के रूप में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। संगीत की शिक्षा इन्हें कहां से प्राप्त हुई इसका उल्लेख नहीं मिलता है। अनुमानतः उस समय का गोवर्धन एक महान व संपन्न सांस्कृतिक केंद्र रहा होगा, उस समृद्ध वातावरण के ही परिणामस्वरुप जनसाधारण की रुचि भी अत्यंत परीष्कृत रही होगी। निश्चय ही कुंभनदास जी जैसे प्रतिभाशाली पुरुषों के लिए इस प्रकार का वातावरण वरदान सिद्ध हुआ होगा।

हवेली संगीत में श्री कुंभन दास जी के पद विपुल मात्रा में गाए जाते हैं। इनका सर्वाधिक गया जाने वाला पद इस प्रकार है–

गिरधरलाल रस भरे खेलत विमल वसंत राधिका संग।
उड़त गुलाल अबीर अरगजा छिरकत भरत परस्पर रंग।।१।।
बाजत ताल मृदंग अधौटी बीना मुरली तनतरंग।
कुंभन्दासस प्रभु यह विधि क्रीड़त जमुनापुलिन लजावत आनंग।।२।।

कृष्णदासजी–

श्री कृष्ण दास का जन्म गुजरात के चिलोतरा नामक स्थान पर संवत १५५३ वि. में हुआ था। आप संवत १५६८ वि. में गोवर्धन में पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए और तभी से श्रीनाथजी की सेवा में रत रहे। तिरोधान संवत् १६३६ वि. में पूंछरी में हुआ। सर्वप्रथम आपको श्रीनाथजी के मंदिर की व्यवस्था सेवा की आज्ञा हुई। यथा (वार्तासाहित्य)–

"और प्रथम सेवा श्रीनाथजी की बंगाली करते३३ पाछें श्री आचार्य जी महाप्रभुन ने कृष्णदास कूं आज्ञा दीनी जो तुम श्री गोवर्धन रहौ सेवा टहल करौ तब कृष्णा अधिकारी भये, अधिकार करने लगे।"

ध्रुव दास जी ने आपकी प्रशंसा करते हुए लिखा है–
"कुंभन, कृष्णदास गिरधर सों कीनी साँची प्रीति कर्म धर्म पथ छाड़ी के गई निज रस रीति।

वार्ता में श्री कृष्णदास जी के कीर्तन की भूरि–भूरि प्रशंसा की गई है। "सो या प्रकार बहोत कीर्तन कृष्णदास जी ने गाए३.. तासों गुसाई जी कहे जो कृष्ण दास रासादिक कीर्तन ऐसे अद्भुत किये सो कोई दूसरे सौ ना होय।"

आपके द्वारा रचित पदों में रास के पद विशेष आकर्षण की वस्तु है। कृष्णदास जी को संगीत का ज्ञान कहा से हुआ, इस विषय में भी कोई उल्लेख नहीं है। श्री हरिराय जी की वार्ता के अनुसार आप १३ वर्ष की आयु में ही पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे और गुजरात से ब्रज में आ गए थे। ऐसा मालूम होता है कि सूरदास, परमानंद

Copyright© 2021, IEASRJ. This open-access article is published under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License which permits Share (copy and redistribute the material in any medium or format) and Adapt (remix, transform, and build upon the material) under the Attribution-NonCommercial terms.

दास, गोविंद स्वामी आदि कुशल गायकों के सहवास में आकर सुन सुन कर ही, आपको कीर्तन करने का ज्ञान हुआ होगा। हवेली संगीत में आपके पद प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। रास के पदों में आपके पदों की संख्या सर्वाधिक है। आपका सबसे अधिक गया जाने वाला पद इस प्रकार हैकृ

गिडगिडतांताता धितांधितां मंदिरलरा बाजे आदि आदि।

श्री सूरदासजी–

यूं तो अष्टछाप के आठो कीर्तनकार अच्छे कवि व गायक थे, किंतु इनमें सर्वश्रेष्ठ स्थान सूरदास जी का ही है।

"आचार्य की छाप लगी हुई जो आठ वीणाएं श्री कृष्ण प्रेम लीला कीर्तन करने उठी, उनमें सबसे ऊंची सुरीली और मधुर झंकार अंधे कवि सूरदास जी की वीणा की थी।"

सूरदास जी का जन्म संवत् १५३५ वैशाख सुदी पंचमी तथा गोलोक वास लगभग संवत १६३८ वि. अथवा १६३६ वि. है। यह मथुरा और आगरा के मध्य स्थित गौघाट पर रहते थे। पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने के अनंतर सूरदास जी आचार्य महाप्रभु के साथ ब्रज में पधारे। सूरदास जी निश्चय ही श्री कुंभदास जी से अधिक कुशल गायक थे। वार्ता साहित्य से ही इस बात की पुष्टि होती है। श्रीकुंभ दास जी संवत् १५५६ में पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे तथा तभी से श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा कर रहे थे, लेकिन जब सूरदास जी संवत् १५६७ में इस संप्रदाय में आए तब श्री वल्लभाचार्य जी का यह कथन (वार्तासाहित्य), "तब श्रीमहाप्रभु जी अपने मन में विचारे जाके श्रीनाथजी के यहां और तो सब सेवा को मंडान भयो और कीर्तन को मंडान कियो है ताते अब सूरदास जी को दीजिए", इस बात की पुष्टि करता है कि सूरदास जी, श्री कुंभन दास जी की अपेक्षा कहीं अधिक कुशल गायक थे। वैसे तो उनके पद अनेक रागो में बंधे है, लेकिन इन्हीं के एक पद को जानने से पता चलता है कि इन्हें 36 राग मुख्यतः प्रिया थे।

सूरदासजी के संगीत गुरु कौन थे तथा किस प्रकार इनको संगीत का इतना ज्ञान हुआ इसका उल्लेख किसी ग्रंथ में नहीं मिलता। वार्ता साहित्य से यही ज्ञात होता है कि सूरदास जी पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने से पहले ही कुशल संगीतज्ञ के रूप में प्रचुर ख्याति प्राप्त कर चुके थे तथा दीक्षित होने के अनंतर उनको बादशाह अकबर ने भी पद श्रवण हेतु बुलाया था।

"और सूरदास जी ने सहस्त्र विधि पद कियै हैं ताकि सागर कहिए सो सब जगत में प्रसिद्ध भाये। सो सूरदास जी के पद देसाधिपति ने सुने सो सुनी के यह विचारौ जो सूरदास जी काहू विधि से मिले तो भलो। तो भागवदिच्छा थे सूरदास जी मिले। सो सूरदास जी सो कहयौ देसाधिपति ने जो सूरदासजी में सुन्यौ है जो तुमने विसन पद बहौत किये हैं। जो मोकों परमेश्वर ने राज दियौ है सो सब गुनी जान मेरौ जस गावत है ताते तुम हू कुछ गावौ। तब सूरदास ने देसाधिपति के आगे कीर्तन गयौ। राग विलावल" मनारे तू करी माधौ सों प्रीति।" यह पद देसाधिपति के आगे संपूर्ण करीके सूरदास जी ने गयौ।"

हवेली संगीत में आपके पद बहुत अधिक संख्या में गाए जाते हैं। इनका "भरोसो दृढ इन चरण केरो" पद इस परंपरा में सर्वाधिक महत्व का समझा जाता है तथा वर्ष पर्यन्त आसरे के पद के रूप में शयन की झांकी के उपरांत राग बिहाग में गया जाता है।

परमानंद दासजी–

श्री परमानंद दास जी कन्नौज निवासी थे। इनका जन्म संवत् १५५० वि. में अगहन सुदी में,तथा गोलोकवास संवत् १६४१ की भाद्रपद ७ को, ब्रिज में सुरभीकुंड पर हुआ। आप संवत् १५७७ में अडैल (प्रयाग) स्थान पर, पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे।

भाव प्रकाश में भी इन्हें अच्छा संगीतज्ञ कहा गया है। " और परमानंद दास ने अपने घर कीर्तन का समाज कियौ। सो गाम गाम में प्रसिद्ध भाये। और परमानंद दास गान विद्या में भी परम चतुर हते।

परमानंद दास जी का संगीत गुरु कौन था इस विषय में कुछ पता नहीं चलता। केवल इतना सर्व विदित है, कि उस समय कन्नौज सांस्कृतिक दृष्टि से संपन्न था। संभवत इसी संपन्नता के परिणाम स्वरुप ही आप अपनी गान विद्या के विकास में सफल रहे होंगे। वार्ता साहित्य के वर्णन से यह सिद्ध होता है, कि आप पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने से पूर्व ही एक कुशल कीर्तनकार के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे।

हवेली संगीत में श्री परमानंद दास जी के पद प्रचुर मात्रा में गाए जाते हैं।

इस प्रकार हमें ज्ञात होता है कि सर्वप्रथम कीर्तनकार श्री कुंभन दास जी हुए, तदनंतर सूरदास जी आने पर श्री सूरदास प्रमुख कीर्तनीया रहे तथा कुंभनदास उनके सहायक थे। इस बीच कृष्ण दास जी भी सुन सुनकर कीर्तन करने लगे होंगे। तक पश्चात श्री परमानंद दास जी के आने पर कीर्तन में और चार चांद लग गए होंगे।

गोविंद स्वामीजी–

गोविंद स्वामी का जन्म लगभग संवत् १५६२ में आंतरि (भरतपुर राज्य) ग्राम में हुआ था। कालांतर में वे ब्रिज में महावन में रहने लगे थे। यथा–

"....गोविंद स्वामी आंतरि ग्राम में रहते। तहाँ गोविंद स्वामी कहावते.... एक समय गोविंद स्वामी आंतरि ग्राम ते ब्रिज को आए महाबन में आए के रहे"।

गोविंददास अच्छे कवि थे। महावन में कुछ दिन रहने के पश्चात आपने, श्री विट्ठलनाथ जी से पुष्टिमार्ग की दीक्षा प्राप्त करी। वार्ता साहित्य के साक्ष से विदित होता है, कि आपको साक्षात 'जुगल जोड़ी' के दर्शन हुए थे और न केवल दर्शन ही, वरन उनका अलौकिक संगीत भी सुनने को प्राप्त हुआ था। यथाकृ "सो गोविंद दास महाबन के टेकरा पर रहते हते। और नये कीर्तन करके गावत हते। और उहां श्री ठाकुर जी सुनीवे कूं पधारे हते। उहां मदन गोपाल दास कायथ कीर्तन लिखीवे कू आवते हते। सो एक दिन श्री ठाकुर को गोविंद स्वामी ने कहीं। इहां ताई आप नित्य श्रम करौ हो। सौ आपकूं गान सुनने की बहुत इच्छा दीखै है। आपकूं गान को अभ्यास है। यातें आपको कुछ गान चाहिए। तब आपने कछु गान कियौ। तब गान सुनीके श्री स्वामिनी जी पधारी। जब ताल स्वर बरोबर बजने लगे तब गोविंद स्वामी धन्य– धन्य कहने लगे। और अपने भाग्य की सराहना करने लगे।"

श्री गोविंद स्वामी कुशाल गायक थे तथा उनकी धारणा थी कि भगवान के समक्ष बेसुरा गाने और बेताल गाने की अपेक्षा ना गाना अच्छा। यथा–

"सो गोविंद स्वामी नित्य जसोदा धाम में जाए बैठते। सो वहां एक दिन एक बैरागी गायवै लाग्यो सराज लाल स्वर हीन संतो। तब गोविंद स्वामी ने कहां की जो तू मत गावे या गाईवे सो कहां होता है। तब वह बैरागी ने कहा मैं तो मेरे राम को रिझावत हूं। जब गोविंद स्वामी ने कहीं राम तो चतुर शिरोमनि है कैसे रीझेंगे। जो तेरो साचो भाव हुए तो मन में नाम लिए सौ रिझेंगे।

हवेली संगीत में श्री गोविंद स्वामी जी के पद प्रचुर मात्रा में गाए जाते हैं। हवेली संगीत में इनका सबसे अधिक लोकप्रिय पद कल्याण राग में है–

।। श्री गोवर्धनराय लाला।। प्यारेलाल तिहारे चंचल नयन विशाला।।

वार्ता साहित्य में कई स्थानों पर उनकी गान विद्या की प्रशंसा मिलती है। उनके संगीत के गुरु कौन थे इसका कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। लेकिन गान कला में, आप तानसेन से भी अधिक कुशल थे। तानसेन स्वयं श्री गोविंद स्वामी जी से गायन सिखाने आए थे।

राजा आसकरण की वार्ता में स्वयं तानसेन ने श्री गोविंद स्वामी को अपना संगीत गुरु माना है। राजा आसकरण के समक्ष एक बार तानसेन ने श्री गोविंद स्वामी जी से सीखा हुआ पद सुनाया था ,तो राजा आसकरण को बहुत अच्छा लगा। जब उन्होंने तानसेन से पूछा कि उसने इस पद को कहां से सीखा तब उसने इस प्रकार कहां है–

"तब तानसेन जी बोले, श्री गोकुल में श्री विट्ठलनाथ जी श्री गोसाई जी हैं विनके सेवक गोविंद स्वामी है विनने ऐसे सहस्रवधी पद गए हैं किंतु श्री गोसाई जी के

सेवक बिना वे और काहू को सिखावत नहीं है। मैं हूं विनके सांग ते श्री गोसाई जी को सेवक भयो हूं।

वार्ता के इसी क्रम में आगे राजा आसकरण का श्री गोविंद स्वामी जी से गायन विद्या सीखने का वर्णन मिलता है। वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित होने के अनंतर श्री गोविंद स्वामी कुछ दिन महावन तथा गोकुल में रहने के पश्चात गोवर्धन में निवास करने लगे, तथा वहां रहकर श्रीनाथजी की, कीर्तन सेवा में रत रहे और जीवन पर्यंत अपने इष्ट देव को रिझाने में लीन रहे। ऐसा प्रतीत होता है कि इनके गोवर्धन निवास की अवधि में अनेक शिष्यों ने आपसे संगीत कला की शिक्षा ग्रहण करी और उनकी यह पाठशाला ब्रिज में संगीत विद्या का प्रधान केंद्र रही। डॉ सत्येंद्र जी ने तत्कालीन सांस्कृतिक वैभव का वर्णन करते हुए ऐसा ही लिखा है।

संवत् १६५२ फाल्गुन कृष्ण सप्तमी को गिरिराज की तलहटी में ही आपका गोलोक वास हुआ। कहा जाता है कि आपने गोवर्धन ही केन्द्रा में सदेह प्रवेश किया था।

श्री छीत स्वामीजी–

आप मथुरा के चौबे थे तथा जन्म संवत् १५७१ पौष कृष्ण दशमी में मथुरा में हुआ था। श्री छीत स्वामी जी ने संगीत की शिक्षा कहां से प्राप्त करी इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनको प्रारंभ से ही संगीत में रुचि रही होगी तथा पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने के उपरांत जब, श्री गोविंद स्वामी, सूरदास व परमानंद दास प्रभृत्ति गायको के संपर्क में आए तब उन्होंने अपने संगीत ज्ञान में पर्याप्त वृद्धि की होगी। संप्रदाय में दीक्षित होने के समय श्री छीत स्वामी ने राग नट में एक पद बनाकर गया था। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि उस समय भी श्री छीत स्वामी को संगीत का अच्छा ज्ञान था। क्योंकि राग नट का गायन करना संगीत की शिक्षा लिए बिना, संभव नहीं हो सकता। 'नगर समूचे' में भी, श्री छीत स्वामी का थोड़ा सा वर्णन मिलता है तथा राग सारंग में 'जो वासुदेव किए पूरन तप तेई फलफलित श्री वल्लभदेव।' पद गान की बात कही गई है।

पुष्टिमार्ग में दीक्षित हो जाने के अंतर श्रीछीत स्वामी आजीवन गोवर्धन मथुरा में रहते हुए अपने इष्ट देव श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में लीन रहे। संवत १६४२ वि. में फाल्गुन कृष्ण सप्तमी को गिरिराज की तलहटी में ही आपका गोलोक वास हुआ। पूंछरी पर स्याम तमाल व अप्सरा कुंड आपके स्मृति स्थल है। हवेली संगीत में आपके अनेक पद गए जाते हैं। इस शैली में आपका जो पद सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ है वह इस प्रकार हैकृ 'आहो विधान तो पे अंचरा पसारी मांगौ।

श्री चतुर्भुज दासजी–

श्री चतुर्भुज दास जी को संगीत का ज्ञान पैतृक संपत्ति के रूप में अपने पिता 'श्री कुंभन दास' जी से मिला था। अष्टछाप के यही एकमात्र ऐसे संगीतकार है जिनके बारे में हमें सप्रमाण ज्ञात होता है, कि इन्होंने संगीत की शिक्षा कहां से और किसी से प्राप्त करी। कविता रचने की व्यवहारिक शिक्षा आपने अपने पिता से प्राप्त तो की ही, साथ ही आप स्वयं भी प्रतिभा संपन्न थे।

वार्ता में कई स्थलों पर चतुर्भुजदास के कीर्तन करने व गाने का उल्लेख किया गया है।

"चतुर्भुज दास के मन में बहुत विरह भायौ, तब श्री गिरिराज के ऊपर बैठकर विरह के कीर्तन कारन लागै"। –अष्टछाप, कांकरोली, पृ.३१२

"ऐसे प्रार्थना के चतुर्भुज दास ने बहुत कीर्तन करीकें सूतक के दिन व्यतीत किये"

अष्टछाप, कांकरोली, पृ.३०६

वैष्णवन की वार्ता में यह ज्ञात होता है कि, श्री चतुर्भुजदास जी को संयोग और वियोग दोनों ही रसों की गहन अनुभूति थी तथा उसके अनुकूल ही गायन करने में कुशल थे। प्रवीण गायक होने के साथ–साथ आपको काव्य कला पर भी पूर्ण अधिकार था। श्री चतुर्भुजदास सदैव भगवत भक्ति में लीन रहते थे। वार्ताकार के अनुसार उनको प्रभु के साक्षात दर्शन होते थे। वार्ता से यह भी ज्ञात होता है कि वह अपना गायन अपने ईष्ट देव 'श्रीनाथजी' को रिझाने के लिए ही करते थे,अन्यत्र नहीं। यहां यह बात कह देना असंगत नहीं होगा कि पुष्टिमार्गीय हवेली संगीत की यह भी एक परंपरा है, कि यहां के संगीतकार मंदिर के अतिरिक्त अन्य स्थान पर गायन नहीं करते है। श्री चतुर्भुज दास गृहस्थ होते हुए भी जीवन पर्यन्त श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में लीन रहे। आपने अपने गायन की शिक्षा अपने पुत्र श्री राघवदास को दी। अपने पिता की ही भांति श्री राघव दास भी अच्छे कवि व गायक थे। लेकिन प्रतीत होता है कि उनकी अल्पायु में ही मृत्यु हो गई अन्यथा उनके द्वारा रचित पद भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते। एक प्रसंग में उल्लेख है कि श्री राघव दास की पुत्री भी कुशल कवि गायक के लक्षणों से युक्त थी। यथा–

"..... राघव दास जी की बेटी ने डेढ़ तुक धरी के धमार पूरी करी। वे चतुर्भुज दास तथा विन के बेटा विन की बेटी यह सब ऐसे कृपा पात्र हते।

संवत १६४२ फाल्गुन कृष्ण सप्तमी को रूद्र कुंड पर आपका गोलोक वास हुआ।

श्री नंददासजी–

आपका जन्म संवत् १५६० वि. में सोरों क्षेत्र के रामपुर ग्राम में हुआ था। कहते हैं कि आप गोस्वामी तुलसीदास जी (रामचरितमानस प्रणेता) के भाई थे। नाभादास जी ने आपका वर्णन करते हुए लिखा है– 'लीला पद रसरीति ग्रंथ रचना में नागर।

सरस युक्ति जुत जुक्ति भक्ति रस गान उजागर।।

इन पंक्तियों में 'भक्ति रस गान उजागर' से ज्ञात होता है, कि श्री नंददास जी कवि होने के साथ–साथ कुशल गायक भी थे। यथा तथा इनका गायन भक्ति रस से परिपूर्ण रहता था। भक्तनामावली से ज्ञात होता है, कि श्री नंददास अपनी धुन के पक्के थे तथा स्वर माधुरी उनको अभीप्सित था। श्री नंददासजी बचपन से ही गायन वादन में रुचि लेते थे। 'सो विनकूं नाच तमाशा देखने को तथा गान सुनने को शौक बहुत हतौ। अष्टसखान की वार्ता से ज्ञात होता है कि श्री नंददास, वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित होने के पूर्व ही गायन करते थे। जिस समय आप एक क्षत्रिया का अनुसरण करते हुए गोकुल आए थे, रास्ते में यमुना नदी पड़ी। क्षत्रिय द्वारा मल्लाहो को कुछ द्रव्य दे देने के कारण उन्होने नंददास को जब यमुना पार नहीं होने दिया तब श्री नंददास ने यमुना के किनारे बैठकर यमुना स्तुति के पद गए। यह प्रसंग पुष्टि संप्रदाय में दीक्षित होने से पूर्व का है। श्री नंददास जी के पद गायन की चर्चा वार्ता साहित्य में भी दी गई है। श्री नंददास जी कालांतर में अच्छे संगीतज्ञ हो गए तथा कुशल गायक के रूप में उनकी इतनी विपुल मात्रा में ख्याति हुई कि उनसे भेंट करने को सम्राट अकबर को स्वयं उनके स्थान आना पड़ा। हवेली संगीत में आपके विरक्षित अनेक पद प्रचुर मात्रा में गाए जाते हैं। संवत् १६४० में मानसी गंगा (गोवर्धन) स्थान पर आप गोलोकवासी हुए। मानसी गंगा पर पीपल का वृक्ष आपका स्मृति स्थल समझा जाता है। अष्टछाप निर्माण के दौरान हमें विष्णु दास का भी नाम मिलता है।

श्री विष्णु दासजी–

गोकुल में श्री विट्ठल नाथ जी के निवास स्थान की चौकीदारी, विष्णु दास छीपा करते थे। श्री विष्णु दास, श्री वल्लभाचार्य के शिष्य थे तथा वह दीर्घ जीवी हुए थे। 'अष्टछाप' की स्थापना के समय में कदाचित गोवर्धन में श्रीनाथजी का कीर्तन करते थे। क्योंकि उनका नाम अष्टसखाओं में आया है। बाद में नंददास के आने पर,उनको अष्टछाप में सम्मिलित किया गया था और विष्णु दास छीपा को गोकुल भेज दिया गया था।

इसके आगे,गोस्वामी विट्ठल दास जी; जिन्होंने इस अष्टछाप प्रणाली को विपुल वैभव प्रदान किया; के कला प्रेम पर चर्चा करना असंगत ना होगा।

गोस्वामी विट्ठल दास जी के अनेक पद, संप्रदाय में बड़े भाव से , अनन्य भक्ति से गए जाते हैं। संप्रदाय की उक्त मान्यताओं को हम धार्मिक विश्वास के रूप में ले सकते हैं। उनके बारे में कुछ बाहर साक्ष्य भी प्राप्त है, जिससे धारणा बनती है कि गोस्वामी विट्ठल नाथ जी का व्यक्तित्व अति प्रभावशाली था। वे विलक्षण प्रतिभा वाले व्यक्ति थे, क्योंकि उन्होंने श्रीनाथजी की सेवा का अभूतपूर्व वा सर्वतोन्मुखी विकास किया था। चित्रकला, संगीत व साहित्य ही नहीं अपितु अन्य उपयोगी कलाओं जैसे पाक कला, पोशाक व आभूषण बनाने की कला आदि का भी उनको पूर्ण रूप से व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त था। तभी उनके द्वारा सेवा का स्वरूप इतना वैभवशाली हो सका, कि आज भी उनके वंशज उनके प्रति आभार प्रदर्शित करते हुए नहीं थकते

हैं। वे गोस्वामी विट्ठलनाथ जी द्वारा प्रवर्तित सारी व्यवस्थाओं को पूर्णतः वैज्ञानिक बताते हुए कहते हैं – 'श्री गोसाई जी श्री विट्ठल नाथ जी ने भारतीय संस्कृति की परंपरा को लक्ष्य में रखकर जीस सेवा प्रणाली का विस्तार किया, वह इतनी सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक सिद्ध हुई कि आज अनेक शताब्दियों के बाद भी उसमें परिवर्तन की तनिक भी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है। निदान श्री विट्ठल नाथ जी ने अपने अनन्य व चतुर्दिक कला प्रेम से संप्रदाय की भारी सेवा करी।उनको विट्ठलेश्वर के नाम से भी पुकारा जाता है।

उन्होंने अनेक अष्टपदियों का निर्माण किया, जिसमें से कुछ, अब भी संप्रदाय में गाई जाती हैं जैसे

1. हरि ब्रिज युवती शत् संगे।
विलसती करिणी गण वृत वारण वर इव रति पति भान होंगे।।ध्रु.।।आदि।।

इस प्रकार गोस्वामी विट्ठल नाथ जी के लिखे कई सारे पद पुष्टि संप्रदाय में आज भी सर्व प्रचलित है। यह श्री विट्ठल नाथ जी का संगीत प्रेम ही था कि उन्होंने श्रेष्ठ भक्त गायको को एकत्रित किया और अष्टछाप के नाम से विख्यात किया। गोस्वामी विट्ठल नाथ जी ने पुष्टिमार्ग के संगीत व साहित्य का विपुल मात्रा में सृजन किया और कराया। विट्ठल नाथ जी ने अपने संप्रदाय की उन्नति के अनेक उपाय सोचे।।

पुष्टिमार्गीय संगीत के साहित्य का आदि स्रोत अष्टछाप ही रहा है। लेकिन इस विषय में तीन बातें स्मरणीय हैं–

1. अष्टछाप के कवियों कि सभी रचनाएं पुष्टिमार्गीय कीर्तन में गई जाती हो, ऐसी बात नहीं है। उनमें से केवल वही रचनाएं गए जाती हैं, जिनका विधान पुष्टिमार्गीय कीर्तन की प्रणालिकाओं में परंपरा से प्राप्त होता है। वैसे भी देखा जाए तो इन कवियों की सारी रचनाओं को गया जाने का अवकाश भी कहां से मिलेगा। अकेले सूरदास जी ने ही कहते हैं, की सवा लाख पद रचे हैं।
2. अष्टछाप की रचनाओं में से केवल ऐसी ही रचनाएं गई जाती है, जो जनसाधारण के पहुंच के बाहर ना हो। साहित्यिक दृष्टि से दरिद्र व्यक्ति भी, उस रचना को समझ सके।पदों के चयन में यही दृष्टि अपनाई गई है।
3. पुष्टीमार्गी कीर्तन का साहित्यिक केवल अष्टछाप की रचनाएं ही हो ऐसी बात नहीं है। उनके अलावा अन्य भक्त गायकों की रचनाएं भी गई जाती है।यह बात सत्य है कि आधुनिक युग के किसी भी कवि की रचना पुष्टिमार्ग में गाइ नहीं जाती है।

संदर्भ–ग्रंथ सूची

1. २५२ वैष्णवन की वार्ता गोस्वामी गोकुलनाथ, प्रकाशक खेमराज श्रीकृष्णदास, 2008
2. आदि वैष्णवाचार्य श्री विष्णु स्वामी और उनका संप्रदाय (प्रकाशक विष्णु स्वामी महासभा वृंदावन)
3. श्री गोवर्धन नाथ जी के प्राकट्य की वार्ता, हरि राय जी कृत, श्री प्रभु दयाल मित्तल मथुरा, 1962
4. 84 वैष्णवन की वार्ता, हरिराय, वेंकटेश्वर प्रेस बंबई,1869
5. अष्टछाप–धीरेंद्र वर्मा, हिंदुस्तानी एकेडमी,1930
6. भक्त नामावली श्री हित ध्रुवदास, काशी नागरिक प्रचारिणी सभा इलाहाबाद, 1901,
7. भ्रमरगीत सार, आचार्य पंडित रामचंद्र शुक्ल,प्रथम संस्करण, नागरिक प्रचारिणी सभा काशी, 1925
8. अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय, डॉ. दीनदयाल गुप्त,भाग 1, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग,1947
9. संगीत अष्टछाप डॉ लक्ष्मी नारायण गर्ग,संगीत कार्यालय हाथरस,1962
10. भक्तमाल टीका भक्ति रस बोधिनी, प्रिया दास, गीता प्रेस गोरखपुर,1769,
11. कीर्तन संग्रह, बसंत कीर्तन, भाग 2, ठा.त्रीकमदास चकुभाई, श्री अच्युत मुद्रणालय, २३३ काळबादेवी रोड, बम्बई,1920–1940
12. हस्तलिखित कीर्तन प्रति– जवाहरलाल चतुर्वेदी मथुरा
13. संगीत चूड़ामणि, जगदेकमल्ल द्वितीय (12वीं शताब्दी), बड़ौदा संस्करण ओरिएंटल इंस्टीट्यूट द्वारा, 1958